शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research
मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly
Vol-4, Issue-2
15 July, 2013

सांस्कृतिक चेतना के समकालीन संदर्भ

डॉ० निधि शर्मा
हिन्दी विभाग, राजकीय उच्चविद्यालय, उपरली कोठी, कांगडा, हि.प्र.

www.shodh.net
Web Portal of Humanity & Social Science Research

सांस्कृतिक चेतना के समकालीन संदर्भ

- डॉ० निधि शर्मा

इतिहास में जय-पराजय चलती रहेगी और मानवता अक्षुण्ण रहेगी। मनुष्य की जय-यात्रा में ऐसे सोपान निरंतर जुड़ते रहते हैं जो मनुष्यता को शाश्वत बनाते है। संभवतः इसलिए चेतना की विकासवादी व्याख्या में उन तत्वों को हम सम्मिलित करने चलते हैं जिसके प्रति रचनात्मक और स्वीकारक्षम होना आवश्यक है। इस आलेख में संस्कृति के उन तत्त्वों के अन्वेषण की आकांक्षा है जो पुरातन से लेकर समकालीन प्रासंगिकता को एक सूत्र में अनुस्युत करतें है।

विषय संकेतः- *संस्कार, विविधता, स्वतंत्रता, सांस्कृतिक चेतना*

किसी देश की जलवायु, भूमि और भौतिक समृद्धि वहाँ के इतिहास और संस्कृति की रूपरेख बनाती है। भौगोलिक परिवेश का संबंध निश्चित भू-भाग के निवासियों के रहन-सहन, खान-पान तथा प्राकृतिक उपादानों से है और संस्कृति वह है जिसमें नैतिकता, नियम, रस्मों-रिवाज, खान-पान और लोगों की आदतें आदि समाविष्ट हैं। भौगेलिक परिवेश तथा सीमाएं प्रत्येक देश की संस्कृति को प्रभावित करती है। प्रत्येक देश का रहन-सहन खान-पान, आचार-विचार भिन्न होने के कारण विभिन्न संस्कृतियाँ पनपती है। भौगेलिक विशालता तथा जाति वैविध्य किसी देश की संस्कति को अनेक रूपों में प्रभावित करती है। इतिहास क्रम में परिवर्तन समाद्धित घटित होता रहता है। परिर्वन के वे अनुभव मानव जीवन की थाती बनते है तथा समाज जीवन में जुड़ते जाते हैं। इसलिए संस्कृति शाश्वत छोरों को छूते हुए भी समकालीन या वर्तमान प्रसंगों को अपने आत्मसात करती है। भारत जैसे विशाल और प्राचीन देश में ये तत्त्व और भी प्रमुख हो जाते है।

१- संस्कृति अर्थ और परिभाषा-

संस्कति का सामान्य अर्थ है-संस्कार करना या परिमार्जन। आधुनिक युग में संस्कृति शब्द का प्रयोग व्यापक एंव विविध अर्थो में होने लगा है। 'संस्कृति शब्द सम उपसर्ग के साथ संस्कृति की (डु) कृ (अ) धातु से बनता है। जिसका मूल अर्थ साफ या परिष्कृत करना है।'[1] संस्कृति मानव की विधायिका शक्ति है। इसके माध्यम से हम अपनी वैचारिक, आध्यात्मिक तथा भावात्मक धरोहर का उत्कर्ष करते है। संस्कृति में मानव-कुल के अनुभवों को लेख जोख संस्कारों के रूप में सुरक्षित रहता है। लोक-संस्कृति समाज की मूलभूत सौंदर्य बोधात्मक सामूहिक सम्पत्ति है। इसके द्वारा सामाजिक मान्यताओं के व्यावहरिक पक्ष का स्वरूप निष्पादित होता है। यह अनवरत सामाजिक प्रक्रिया है, जिसमें अतीत की मान्यताएँ व्यक्त अथवा अव्यक्त रूप से समाहित होकर हमारे संस्कारों अनुष्ठानों, भावात्मक गतिविधियों तथा चिन्तन परम्पराओं को प्रभावित करती चली आ रही है। 'संस्कृति मनुष्य की विविध साधनों की सर्वोतम परिणति है। धर्म के समान वह भी अविरोधी वस्तु है। वह समस्त दृष्यमान विरोधों में सामंजस्य स्थापित करती है। भारतीय जनता की विविध साधनाओं की सबसे सुंदर परिणति को ही भारतीय संस्कृति कहा जा सकता है।[2] 'अपने जीवन में हम जो संस्कार जमा करते है।, वह भी हमारी संस्कृति के अंग बन जाते हैं। संस्कृति वह है जिसकी व्यापकता हमारे पूरे जीवन में है। तथा जिसकी रचना और विकास में उनके सदियों के अनुभवों का हाथ है। 'संस्कृति उन समस्त क्रियाओं का कहते है, जिनके द्वारा मनुष्य अपने को विश्व की निरूपयोगी किन्तु अर्थवती छवियों से, फिर वे छविया चाहे प्रत्यक्ष हों अथवा कल्पित, संबंधित करता है।[3] 'संस्कृति का घनिष्ठ संबंध संस्कार से होता है और इन संस्कारों के निर्माण की भी एक प्रक्रिया है जिसका मूल्यांकन हम मानव जाति के आदिम युग से अब तक की विकासमान स्थिति के आधार पर सरलता से कर सकते हैं। 'जातीय संस्कार ही संस्कृति है।'[4]

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research
मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-2
15 July, 2013

सांस्कृतिक चेतना के समकालीन संदर्भ

डॉ० निधि शर्मा
हिन्दी विभाग, राजकीय उच्चविद्यालय, उपरली कोठी, कांगडा, हि.प्र.

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

उपर्युक्त मान्यताएँ संस्कृति के भिन्न-भिन्न पक्षों को स्पष्ट करती हैं। किसी बंधी हुई परिभाषा के अंतर्गत संस्कति को स्पष्ट करना अत्यंत कठिन हो जाता है। संस्कृति की व्यापकता अविच्छिन्नता, गहनता तथा परिष्कार प्रवृतियों ने इसे और भी दुरूह बना दिया है। संस्कृति उस सुंदर सरिता के समान है जो अपने स्वच्छ भाव से निरंतर प्रवाहित होती रहती है। यदि सरिता के प्रवाह को बांध दिया जाए तो सरिता फिर नही रह जाएगी। इसी प्रकार संस्कृति को शब्दों की सीमा में बाँध देने पर उसकी प्रवाहशीलता का निदर्शन नही हो सकता। सामान्य रूप से हम मानव विकास के साथ उसकी श्रेष्ठतम उपलब्धियों का संस्कृति मानते है। मनुष्य ने जो आचरण और व्यवहार सीख, परम्परा द्वारा जिस रहन-सहन,आचार-विचार और मान्यता को ग्रहण किया तथा उसे सामान्य से विशिष्ट बनाया, वही संस्कृति बन गई।

२- संस्कृति के मूल तत्व-

२.१- धार्मिक तत्वः

धर्म, भारतीय संस्कृति का प्राण एवं प्रेरणा सोत रहा है। पृथ्वी का माता मानना,पीपल और नाग का पूजना, जल एवं अग्नि देवता की पूजा परलोक में विश्वास, ये सब धर्म अनुष्ठान भारतीय संस्कति की एकता के महत्त्वपूर्ण कारण रहे हैं। वर्तमान भारतीय समाज वैज्ञानिक तथ्यों को आत्मसात् कर चुका है, वैज्ञानिक प्रगति की साक्षी है। साथ ही धर्म की मौलिक स्थापनाएँ एवं मौलिक तत्त्व उसके मानस में जाज्वल्यमान हैं। सामाजिक जीवन का नियामक आज भी धर्म है। धर्म एक मर्यादा है, जिसने समस्त ब्रहाण्ड को नियंत्रित किया हुआ है। अतः कहा जा सकता है कि धर्म संस्कृति का आधारभूत तत्व है।

२.२- दार्शनिक तत्वः

संसार का दु:खमय मानकर इस दु:ख की निवृति का साधन खोजना ही दर्शन का मुख्य ध्येय रहा है। बड़े-बड़े महापुरुषों और ऋषि-मुनियों ने अपनी विचारधाराओं से मनुष्य को प्रभावित किया मनुष्य और संसार, शरीर और आत्मा, कर्म और फल, लोक और परलोक आदि विषयों पर मनुष्य ने विचार किया और इसलिए आदि काल से ही उसकी विचारधारा सभी दिशाओं में प्रवाहित हुई। इस संबंध में भारतीय दर्शन का वेग बहुत ही प्रबल रहा। इसमें समय-समय पर अन्य धाराएँ मिलीं, जिन्होंने इसके वेग में तेजी दिखाई। इसीलिए भारतीय दर्शन के विभिन अंग है, वेदान्त और मीमांसा, न्याय और वैशेषिक तथा सांख्य और योग मिलकर षड दर्शन के नाम से प्रसिद्व है। दर्शन में रूप से तत्वों का साक्षात्, अनुभव करण आवश्यक है। श्रवण मनन साक्षात्कार तथा तर्क हो दर्शन की क्रियाएँ है। अविद्या का नाश कर ज्ञान प्राप्त करना ही दर्शन का परम लक्ष्य है। आज भी भारतीय मनीषा शिक्षा के द्वारा लोगों को जागरूक कर अविद्या का नाश करने का संदेश देती है। लोकतांत्रिक मूल्यों की स्थापना। अतः सांस्कृतिक निर्माण में दर्शन का महत्त्व अक्षुण्ण है।

२.३- कलात्मक तत्वः

संस्कृति के प्रसार में कला का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। सिंधु घाटी की सभ्यता के अवशेषों से ज्ञात होते है कि उस समय में भी भारतीय वस्तु एवं शिल्प कलाओं ने बड़ी प्रगति की। खुदाई में मिली मूर्तियाँ शिल्प कला का प्रतीक है। कला के विविध रूप चित्रकला, मूर्तिकला, वास्तुकला, लोककला, संगीतकला इत्यादि संस्कृति का सुदृढ़ आधार है। अतः सांस्कृतिक निर्माण में कला का महत्त्वपूर्ण योगदान है।

३- भारतीय संस्कृति के गुण-

भारतीय संस्कृति न तो एक काल में विकसित हुई और न ही रुढ़िवादी बन कर रही। आदि काल से ही यह एक शिला के रूप में अविचल रही। अन्य सांस्कृतिक लहरों के थपेड़ों ने इस पर आघात किया पर वे इसके मुलस्वरूप को नही बदल सके। उनकी खूबियों इसी का अंग बन गई और सभयता और उनका पृथक अस्तित्व नष्ट हो गया। ''भारत की सभ्यता और संस्कृति विश्व की प्राचीन सम्यताओं एवं संस्कृतियों में उसका

SHODH SANCHAYAN

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research
मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-2
15 July, 2013

सांस्कृतिक चेतना के समकालीन संदर्भ

डॉ० निधि शर्मा
हिन्दी विभाग, राजकीय उच्चविद्यालय, उपरली कोठी, कांगडा, हि.प्र.

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

महत्त्वपर्ण स्थान है। जिस समय संसार के अनेक देश अंधकारमय जीवन व्यतीत कर रहे थे, उस समय भारत का विश्व का गुरू माना जाता था। भारत ने उस समय एशिया के कई द्वीपों में अपनी संस्कृति का प्रसार किया और वहाँ के लोंगों को सभ्य और सुसंस्कृत जीवन व्यतीत करना सिखाया विश्व की प्राचीन सभ्यताएं मिश्र, सुमेर, यूनान एवं रोम आदि आज लुप्त हो चुकी है। परंतु भारतीय संस्कृति उनके थपेडों का सहती हुई आज भी जीवित है।" [5]

३.१- धार्मिक सहिष्णुता और उदारता:

धार्मिक सहिष्णुता और उदारता भारतीय संस्कृति की शिला रही है। यह भारतीय संस्कृत का मूल सिद्धांत रहा। सभी धर्मों के प्रति सहनशीलता की भावना भारतीय संस्कृति में पाई जाती है। भारतीय जनजीवन इतिहास में देखने को नही मिलते है। वे आदर्श है, सहिष्णुता, उदारता और महत्त्व के इन्ही उच्चादर्शों ने अतीत के हजारों वर्षों से उसको सुरक्षित रखा और उसकी परम्परा को अटूट रूप से आगे बढाया"[6] भारत में भिन्न-भिन्न धर्मों के लोग आपस में मिलजुल कर और प्रेम के साथ रहते हैं।

३.२- विविधता में एकता:

भारतीय संस्कृति में विविधता में एकता पाई जाती है। भारत एक विशाल उपमहाद्वीप है। यहाँ पर विभिन्न प्रकार की भूमि, विभिन्न प्रकार की जलवायु, विभिन्न प्रकार की भाषाएँ, विभिन्न प्रकार के धर्म और भिन्न प्रकार की जातियों के लिए निवास करते है। इतनी विभिन्नताएँ होने के बाबजूद भी इस देश में भौगोलिक धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक एकता देखने को मिलती है। "यद्यपि इस देश में विभिन धर्मानुयायी है। किन्तु हिन्दू धर्म के केन्द्र से बाहर संस्कृति की जो विशाल परिधि है उसके भीतर वसने वाले सभी भारतीय समान है।"[7]

३.३- विश्व कल्याण की भावना:

भारतीय इतिहास को पढ़ने पर ऐसे बहुत से उदाहरण मिल जाते है। जिसमें भारतीय संस्कृति में विश्व कल्याण की भावना पाई जाती है। यूनानी, इरानी हूँण इत्यादि विदेशी यहाँ आए और वे भारतीय रंग में ऐसे रंगे कि उनका यहा अपना अस्तित्व नष्ट हो गया। भारतीय चिन्तन विश्व की अवधारणा, वसुधैव कुटुम्बकम् 'के रूप हुई है।

३.४- समन्वय की भावना:

भारतीय संस्कृति में समन्वय की भावना कूट-कूट कर भरी हुई है। समन्वय शक्ति के दर्शन हमें आर्यों के समय से मिलने शुरू हो गए। ''भारतीय संस्कृति के प्राण में एकत्व है, उसके रक्त में सहानुभूति है, यही कारण है कि आज देश में सहाधिक समाज एक-दूसरे को बाधा न पहुँचाते हुए भी अपनी अपनी विशेषताओं के साथ जीवित है।, भारतीय संस्कृति ने सदा समन्वय के रूप में समस्या का समाधान किया है।"[8] भारतीय संस्कृति में समन्वयात्मक दृष्टिकोण ने ही उसे सबल बनाया है।

३.५- गतिशीलता:

संस्कृति कोई स्थिर वस्तु नही है। यह सतत, विकासमान प्रक्रिया है, जीवन शैली है। समाज की मान्यताओं आदर्शों एवं मूल्यों का संगठन है तथा युगानुरूप परिवर्तनों को आत्मसात करती हुई अबाध गति से प्रवाहमान धारा है। भारतीय संस्कृति सदा से ही गतिशीत रही है। "भारतीय संस्कृति विश्व की किसी भी संस्कृति की अपेक्षा अधिक जीवन गतिशीत एवं शाश्वत है। यही कारण है,अनेक देशी-विदेशी प्रहारों से आहत होने पर भी वह अजर -अमर रही है।[9] "सहिष्णुता, उदारता और गतिशीतला भारतीय समाज और संस्कृति के हजारों सालों से जीवित रहने का रहस्य है। इस प्रकार भारतीय संस्कृति को देखने से यह स्पष्ट मालूम पड़ता है कि भारतीय संस्कृति और सामाजिक व्यवस्था सदैव परिवर्तनशील रही है।

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research
मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly
Vol-4, Issue-2
15 July, 2013

सांस्कृतिक चेतना के समकालीन संदर्भ

डॉ० निधि शर्मा
हिन्दी विभाग, राजकीय उच्चविद्यालय, उपरली कोठी, कांगडा, हि.प्र.

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

३.६ कर्मवाद:

भारतीय संस्कृति कर्म को सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण मानती है। कर्म का अर्थ है जो किया जाए। यत कृत तत्कर्म कर्म का सिद्वांत किया और प्रतिक्रिया, कारण, कार्य और उसके फल का सिद्धांत है। कर्मवाद का सिद्धांत जीवन की निरतरण का सूचक और आत्मिक विकास करने की प्रेरणा देने वाला है। अपूर्ण से पूर्ण की ओर जाने की यात्रा का अंत मोक्ष में ही होता है और सत्कर्मों से ही यह सम्भव है, कर्म का प्रभूत्व अद्भूत है। उसकी शक्ति अमाप है। कर्म की शक्ति मन और मस्तिष्क को सुदृढ़ बनाने में लिया है। अगर मनुष्य के मन ने कर्मशक्ति को अपना बड़े पहाड़ भी इस शक्ति से काँप उठते है। सागर मार्ग दे देता है और आकाश अपने रहस्य खोल देता है।[10] "कर्म ऐसा दिव्य अस्त्र है जिसके आगे बड़े से बड़ा अस्त्र भी तुच्छ दिखने लगता है। कर्म ही मानव का जीवन मंत्र है, जिससे वह जिंदा रह सकता है और संसार को जीवित, रख सकता है। कर्मष्ठ ही आशावान रह सकता है। क्योंकि कर्म ही मानव की आशा-आकांक्षाओं को साकार करने का साधन है। इसी विश्वास के कारण भारतीय संस्कृति ने कर्म की आवश्यकता पर विशेष बल दिया है।

३.७ आशावादिता:

हमारी संस्कृति का एक सुपरिणाम आशावादिता है। अपने लक्ष्य के प्रति अविश्वास एवं संशय का भार मानव को दुर्बल कर नष्ट कर देता हे।गीता में यही उपदेश कृष्ण ने अर्जुन को दिया था। हृदय में विश्वास हो तो भयंकर बाधाओं को भी मनुष्य सहज ही पार कर लेता है। अन्य संस्कृतियों की तरह हमारे यहाँ किसी भी कार्य का समापन दु:खद, पराजयपूर्ण तथा निराशाजनक नही होता। हमारे ऋषियों का मत है कि रात के बाद दिन, अंधेरे के बाद प्रकाश, पराजय के बाद विजय अनिवार्य है। यदि हम उदासी के पलों को अपनी गाँठ में बांध कर रख लेंगे तो जीवन बोझिल और निराशजनक हो जाएगा और यदि हम यह मानकर चलेंगे कि यह सब दु:ख, जय-पराजय, हानि-लाभ मान-अपमान सब चक्राकार पंक्तिवत है तो जीवन में विश्वास बना रहता है। हमारी संस्कृति ने जीवन में उल्लास को महत्त्व दिया है। हमने कभी आशा का दामन नही छोड़ा। आशावादिता, भारतीय संस्कृति और जीवन का सबसे काम्य, सबसे अभिलाषित तथा महान मूल्य है।

३.८ विचार और तर्क की स्वतंत्रता:

भारतीय संस्कृति की एक प्रधान विशेषता है विचार और तर्क की स्वतंत्रता। संसार में सब मनुष्य एक से नही होते । सबकी एक-सी बुद्धि, एक-सी योग्यता एक-सी प्रकृति, एक-सी रुचि और एक-सी मानसिक शक्ति भी नही होती। अत: सभी अपनी योग्यता तथा रुचि के अनुसार ही अपने-अपने कार्य-क्षेत्र में तत्पर होते है। संस्कृति के ग्रंथो महाभारत, रामायण, पुराण आदि में विचार और तर्क की स्वतंत्रता संबंधी भावनाएँ भरी पड़ी है। भारतीय संस्कृति की यह प्रवृति संसार के लिए आदर्श है। डॉ0 त्रिलोचन सिंह ब्रिंदा लिखते है।- " भारतीय संस्कृति में प्रत्येक व्यक्ति को अपनी रुचि तथा श्रद्धा के अनुसार विश्वास रखने और उसको प्रकट करने की पूरी स्वतंत्रता है। आप अपने विचार के अनुसार कार्य कर सकते है। तथा उसका प्रचार भी कर सकते है।"[11]

विचार-अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता तथा तर्कधार्मिता के कारण जितना चिन्तन इस देश में हुआ है उतना संसार के अन्य किसी भी देश में हुआ है। इसका मुख्य कारण तर्क द्वारा विचार की अभिव्यक्ति का विकास रहा है। आस्तिक तथा नास्तिक, सगुणोपासक तथा निर्गुणोपासक, मूर्तिपूजा के समर्थक और मूर्तिपूजा के विरोधी, बहुदेववाद में विश्वास रखने वाले और इसके विशेधी सबको अपने-अपने ढंग से पूजा करने की अपने-अपने विचार अभिव्यक्त करने की तर्कपूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त है। अत: कहा जा सकता है कि चिन्तन के क्षेत्र में विचार और तर्क की एसी स्वतंत्रता कही नही मिलेगी।

३.९ आध्यात्मिकता:

आध्यात्मिकता, भारतीय संस्कृति की सबसे मूल्यवान, विशेषता है। यही इस संस्कृति को जीवंत और महान, बनाए हुए है। अध्यात्म का अर्थ है। आत्मा से ऊपर अर्थात परम आत्मा-संबंधी ज्ञान। बुद्वि के परे जो

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research
मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-2
15 July, 2013

सांस्कृतिक चेतना के समकालीन संदर्भ

डॉ० निधि शर्मा
हिन्दी विभाग, राजकीय उच्चविद्यालय, उपरली कोठी, कांगडा, हि.प्र.

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

सत्य है वही आत्मा का सत्य है और आध्यात्मिक ज्ञान का विषय भी वही है। "आध्यात्मिकता ही भारतीय संस्कृति को जीवंत व अमर बनाए हुए है। भारतीय संस्कृति न शरीर की उपेक्षा करती है, न प्राण और न मान की। लेकिन उसका लक्ष्य है-आत्मिक विकास अर्थात आध्यात्मिक उपलब्धि"[12]

अध्यात्म की भूमि बहुत विस्तृत है। आत्मा का स्वरूप उसका स्वभाव, मन, बुद्वि, इन्द्रिय: इनका आत्मा से संबंध पुनर्जन्म, धर्म आत्मा की उन्नति के लिए आचरण आदि सभी विषय अध्यात्म से संबंध रखते है। आध्यात्मिकता भारतीय संस्कृति का महत्त्वपूर्ण गुण है। आध्यात्मिकता ने भारतीय संस्कृति के किसी अंग को अछूता नही छोड़ा। कला, साहित्य, संगीत, दर्शन धर्म, विज्ञान आदि सभी ही वह विश्व की अन्य संस्कृतियों से पृथक दिखाई देती है। और श्रेयस्कर ठहरती है। आज भी भौतिकवादी पाश्चात्य, अध्यात्म भारत से मार्ग दर्शन की आकांक्षा रखता है।

३.१० धर्म और कर्त्तव्य की महत्ता:

भारतीय जीवन में धर्म का बडा महत्त्व है। भारतीय संस्कृति के अनुसार धर्म का वास्तविक तात्पर्य कर्त्तव्य से है। मानव अपने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में कर्तव्य करता हुआ इहलौकिक और पारलौकिक दोनों ही क्षेत्रों में सुख-शांति की कल्पना करता है। धर्म से मानव को प्रत्येक क्षेत्र में, प्रत्येक क्षण, उचित और न्यायपूर्ण कार्य करने की प्रेरणा मिलती है। समाज, परिवार, देश में स्वत: स्वीकृत धारणा द्वारा ही व्यक्ति अपने कर्त्तव्यों का निर्वाह करता है। सहज भाव से अपने कर्त्तव्यों का निर्वाह ही धर्म है। प्रकृतिजन्य प्रत्येक वस्तु का अपना धर्म है। यथा, अग्नि का धर्म उष्णता है और जल का धर्म शीतलता। उसी प्रकार मनुष्य का भी अपना एक धर्म है जिनके अभाव में उसका मनुष्यत्व निराकार है। जिन सिद्धांतो के परिपालन से जीवन मे सफलता मिले अथवा जीवन कल्याणमय हो, वही धर्म है। ''धर्म ही अन्य तीन पुरुषार्थो की सिद्धि का साधन माना गया है अर्थात धर्म की सिद्धि साधना से ही अर्थ काम और मोक्ष की प्राप्ति होती है अनंतकाल से भारतीय जीवन में धर्म का प्रतिमान सर्वोच्च रहा है । इसी के बल पर भारत विश्व में गर्वोन्नत होकर उपदेष्टा भी बना रहा।"[13]

भारतीय संस्कृति मूलत: धर्म निष्ठ रही है । धर्म के मूल तत्व, विश्व की किसी भी सभ्यता तथा संस्कृति को असमान्य नही है। इन अविरोधी तथा सर्वमान्य तत्वों का व्यवहारिक रुप व्यक्ति के चरित्र का गठन और नैतिकता का निर्माण करता है। प्रकारांतर से यही धर्म, कर्त्तव्य का पर्याय है। नीतिकारों ने इसलिए सत् कार्य के सम्पादन में धर्म का उल्लेख किया है।

३.११ अहिंसा:

अहिंसा, मानवतावाद की प्राणशक्ति है। जब तक हम हिंसा में लगे रहेगें, तब तक हम एक-दूसरे के प्रति प्रेम भावना पैदा नही कर सकते। सभी धर्म-ग्रंथों में अहिंसा की महिमा कही गई है। "अहिंसा से हृदास्थ भावनाएँ बलवती ही नही होती, बल्कि संकल्प-शक्ति का भी विकास होता है।" अहिंसा परमो धर्म:' वाली भारतीय संस्कृति स्नातन, चिरंतन है। भारतीय दर्शन में अहिंसा एक बहुत व्यापक महत्त्व एवम सूक्षम विवेक-दृष्टि का मूल्य है। यह मूल्य युगीन संदर्भो एवं आवश्यकताओं के अनुरुप कभी सर्वप्रथम महत्त्व को तो कभी सर्वोपरि एवं कभी सामान्य व्यवहार या कभी आवरण के एक पक्ष के महत्त्व को पाता रहा है।"[14]

अहिंसा, हिंसा का निबन्ध मात्र नही, उसमें प्रेम की सम्प्राप्ति भी है। अहिंसा की प्रतिष्ठा से वैर भाव का लोप होता है। अहिंसा यानि प्राणी मात्र पर दया, ममता। अहिंसात्मक होना व्यापक अर्थ में संस्कृत होना, मानव बनना है । भारतीय संस्कृति में अहिंसा को धर्म मान मानवता के लिए हित एवं विश्व बंधुत्व के लिए इसे सर्वोपरि स्थान दिया है।

३.१२ श्रद्धा:

भारतीय संस्कृति में श्रद्धा का विशेष महत्त्व है। श्रद्धा का मूल तत्व है, दूसरे का महत्त्व स्वीकारना। अत: जिनकी स्वार्थबद्ध दृष्टि अपने से आगे नही जा सकती अथवा अभिमसन के कारण ही बड़ाई के अनुभव

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research
मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-2
15 July, 2013

सांस्कृतिक चेतना के समकालीन संदर्भ

डॉ० निधि शर्मा
हिन्दी विभाग, राजकीय उच्चविद्यालय, उपरली कोठी, कांगडा, हि.प्र.

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

की लत लग गई है, वह श्रद्धा भाव को धारण नही कर सकते। "किसी मनुष्य में जनसाधारण से विशेष गुण एवं शक्ति का विकास देख, उसके संबंध में जो स्थायी आनंद-पद्धति हृदय में स्थापित हो जाती है, उसे श्रद्धा कहते है। श्रद्धा महत्त्व की आनंदपूर्ण स्वीकृति के साथ-साथ पूज्य बुद्धि का संचार है।"[15] हमारी संस्कृति में श्रद्धा का बहुत महत्त्व है। हर कार्य में श्रद्धाभाव वांछित है। धन से श्रद्धा को अधिक महत्त्वपूर्ण माना गया है। हृदय के सेकल्प से श्रद्धा की ही उपासना होती है। श्रद्धा की भावना मन को शान्ति, सुख प्रदान करती है।

३.१३ त्याग:

भारतीय संस्कृति में त्याग की महिमा का अदभुत रुप देखने को मिलता है। त्याग में ही जीवन का वास्तविक आनंद है। यदि कोई वस्तु मानवता को महानाश से बचा सकती है तो वह त्याग है। भारतीय संस्कृति में संग्रह की अपेक्षा त्याग पर अधिक बल दिया गया है। "भारतीय संस्कृति एवम् पश्चात्य संस्कृति में जिन अनेक मूल्य बातों के आधार पर भेद है, उनमें से एक त्याग की भावना भी है। पश्चिम में त्याग को इतना सम्मान नही मिलता, जितना संग्रह को। जबकि भारत में त्याग की वृति सदा सराही गई है। निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि त्याग, मानवतावादी संस्कृति का आधार स्तम्भ है तथा मानवमात्र के कल्याण और सुख का इसे द्वार माना जाता है। मनुष्य की जययात्र तथा स्वयं को पाने का यही एक मूल्य मंत्र है।

३.१४ करुणा:

दीन-दु:खियों के प्रति करुणा की भावना रखना,उसे सुख पहुँचाना ही करुणा अथवा कारुण्य है। समाज में सत्य, अहिंसा, दया, सहयोग आदि मानव-मूल्यों के समान करुणा भी महत्त्वपूर्ण है। करुणा का मतलब है सभी मानव प्राणियों के प्रति प्रेम या दया अथवा प्रेम भारी दया का प्रदर्शना चाहे बुद्ध हो या महावीर,राम हो या सम्राट अशोक। वे सभी अपने हृदय में अपार करुणा और संवेदनाए लेकर अपने मार्ग पर अग्रसर हुए थे। "करुणा परोन्मुख होती है,अन्यों के दु:ख का निवारण ही उसकी कृतकृत्यता है। परम:खकातर कारुणिक कभी-कभी अपने प्राणों की बाजी लगाकर भी दूसरो के दु:ख के प्रतिकार में प्रवृत होता है।"[16] अत: करुणा सात्विक अंत: करण की मूलवृति है। करुणा के माध्यम से सभी शोभन कर्मो का सम्पादन किया जाता है। करुणा एक ऐसा व्यापक सद्गुण है जो समस्त शीलों में अंतर्निहित है।

३.१५ अतिथि-सत्कार:

भारतीय संस्कृति में अतिथि को सम्मानजनक स्थान प्राप्त है। 'अतिथि देवो भव' जैसी उक्तियो के अनुसार अतिथि को देवता मानकर उसके सत्कार की प्रथा यहा रही है। अतिथि का अनादर पाप में हिस्सेदारी का घोतक है। नर में नारायण के दर्शन करना हमारी मानवता के प्रति सम्मान भावना का द्योतक है। 'ना जाने केहि भेस में, नारायण मिलि जाई'। भारतीय संस्कृति व्यक्ति को सर्वोच्च सम्मान देती है। मानव का अपमान मानवता का निरादर है। इसलिए भारतीय घर में आए हुए किसी भी दीन-दु:खी, सुखी, याचक, विद्वान तथा साधु-साधक, तपस्वी का सम्मान करता है। हमारे यहाँ तो घर में आए शत्रु का अपकार/अपमान नही करते । इसलिए भारतीय संस्कृति विश्वभर में अपने आतिथ्य के लिए विख्यात है।

३.१६ सत्य की खोज:

सत्य की खोज और इसके लिए निरंतर अथक प्रयास भारतीय संस्कृति की एक महती विशेषता है। वैदिककाल के ऋषि-मुनियों से लेकर कपिल, कणाद, गौतम जैसे दार्शनिक, विचारक और मनीषी तथा नानक और कबीर जैसे संत और सत्यवादी हरिश्चन्द्र, रामकृष्ण परमहंस, योगी अरविन्द तथा महात्मा गाँधी जैसे महापुरुष जो भारतीय संस्कृति के पुरोध है।, इन्होने अपना सारा जीवन एकमात्र सत्य की खोज और आचरण में ही लगा दिया। सत्यपालन और सत्य की खोज भारतीय संस्कृति की केवल एक ही विशेषता ही नही है।, यह भारतीय संस्कृति की आधारशिला है। हमारे ऋषि-मुनियों, हमारे पूर्व पुरुषों ने भारतीय संस्कृति की इमारत को

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research
मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-2
15 July, 2013

सांस्कृतिक चेतना के समकालीन संदर्भ

डॉ० निधि शर्मा
हिन्दी विभाग, राजकीय उच्चविद्यालय, उपरली कोठी, कांगडा, हि.प्र.

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

इसी सत्य की आधारशिला पर खड़ा किया था। ''सत्य एक उत्कृष्ट व्यापक और सूक्ष्म विचारसापेक्ष मानवमूल्य है। किसी विशेष प्रसंग में सर्वप्रथम यह आश्रय के मनोजगत् में प्रकट होता है।''17 तदनंतर वाणी और अंतत: कर्म के माध्यम से प्रकट होता है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि सत्य की राह पर चलकर मानव-मुक्ति का पथ उजागर होता है इसीलिए भारतीय संस्कृति ने जीवन के औदात्य को बनाए रखने के लिए सत्य की महत्तम अनिवार्यता को स्वीकारा है।

३.१७ प्रकृति और मानव का सहसंबंध:

मनुष्य सदा से ही प्रकुति के सानिध्य और संरक्षण में रहा है। प्रकृति के बिना उसका जीवन अधिक कालतक सम्भव नही। जन्म से लेकर अंतिम समय तक मनुष्य प्रकृति का दास, उपासक और कृतज्ञ है। प्रकृति ने मनुष्य को भरपूर आनंद और संतोष दिया है। भारतीय साहित्य में कही भी प्रकृति को मनुष्य ने भिन्न नही माना गया है। सारे वेदो, उपनिषदों, पुराणो, आख्यकों, ब्राह्मण ग्रंथों स्मृतियों एवं महाकाव्यों तक में पदे-पदे प्रकृति के अनेकों रुप और उदाहरण वर्णित है। मानव के साथ प्रकृति अपना घनिष्ठ संबंध बनाए रखती है। प्रकृति के साथ अपना गहन नाता मानकर मनुष्य सदा उसी के अनुरुप सक्रिय रहता है और उसके प्रत्येक रुप का वह स्वागत करता है। अत: स्पष्ट रुप से कहा जा सकता है कि प्रकृति और मानव सदा-सदा से ही अन्योन्याश्रित है। वे एक-दूसरे के लिए है। और एक-दूसरे के उपकारक है।

निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि भौगेलिक परिवेश तथा सीमाए प्रत्येक देश की संस्कृति को प्रभावित करती है। प्रत्येक देश का रहन-सहन खान-पान, आचार-विचार भिन्न होने के कारण विभिन्न संस्कृतिया पनपती है। भौगेलिक विशालता तथा जाति वैविध्य के कारण ही किसी देश की संस्कति की अनेकता में एकता को अनेक रूपों में प्रभावित करता है। तो भी संस्कृति के समकालीन संदर्भों को भी यदि ध्यान में रखे तो संस्कृति के मूल तत्त्व और उनकी विशेषताएँ आज भी यथावत हैं। वैश्वकीरण आदि के कारण तकनीक आदि के नए संदर्भों में भी पूर्वोक्त सांस्कृतिक संदर्भ यथावत् है।

संदर्भ:-

1- डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा: हिन्दी साहित्य कोश (भाग-1) पृ0868, तृतीय सं0 1985
2- डॉ0 हजारी द्विवेदी: अशोक के फूल, पृ058 सं0 1966
3- डॉ0 देवराज: संस्कृति का दार्शनिक विवेचन, पृ0173, द्वितीय सं0 1972
4- बाबू गुलाबराय: भारतीय संस्कृति की रुपरेखा, पृ01, सं01956
5- डॉ0 एस0 एल0 नागोरी: भारतीय संस्कृति, पृ03, सं01985
6- बाचस्पति गैरोला: भारतीय संस्कृति और कला, पृ078 सं0 1973
7- रामधारी सिंह दिनकर: संस्कृति के चार अध्याय, पृ0659 सं0 1956
8- आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी : विचार और वितक्र, पृ0187 सं0 1969
9- डॉ0 हरमाहन लाल सूद: हजारी प्रसाद द्विवेदी का सर्जनात्मक साहित्य एवं संस्कृति/मानवीय मूल्यों का निकष, पृ041 सं0 1998
10- डॉ गीता देव: पंत काव्य में समाज एवं संस्कृति, पृ0288, सं02002
11- डॉ त्रिलोकचंद तुलसी(सं0): विश्वज्योति (विश्व-संस्कृति अंक, भाग-2) पृ0182, सं0 1993
12- डॉ0 संगीता सास्वत: हिन्दी के ललित निबंधों में सास्कृतिक मूल्य पृ098, सं0 1998
13- डॉ0 राहुल: अटल बिहारी वाजपेयी की काव्य साधना पृ044, सं0 1999
14- डॉ0 कंचनलता आनंद: प्रसाद तथा राम की मूल्य चंतना पृ0114, पृ0, सं0 2000
15- रामचंद्र शुक्ल: चिंतामणि भाग-1 पृ014, सं0 1963
16- डॉ0हर्षनारायण: भारतीय स्नातना संस्कृति: विविध आयाम, पृ0103, सं0 1993

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research
मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-2
15 July, 2013

सांस्कृतिक चेतना के समकालीन संदर्भ

डॉ० निधि शर्मा
हिन्दी विभाग, राजकीय उच्चविद्यालय, उपरली कोठी, कांगडा, हि.प्र.

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

17- डॉ0 धर्मपाल मैनी (सं0): मानव मूल्य परक शब्दावली का विश्वकाश (खण्ड तृतीय), पृ0 1086, सं02005

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN